मन्त्र पुरश्चरण विमर्श

'पुरश्चरण' का अर्थ है-मन्त्र की पूर्व-सेवा। जब तक दीक्षा के बाद मन्त्र की यथाविहित 'पूर्व-सेवा' नहीं होगी, उससे वांछित फल की प्राप्ति नहीं हो सकती। इसीलिये सभी तन्त्रग्रन्थों में मन्त्रपुरश्चरण की अनिवार्यता रेखांकित की गई है। 'रुद्रयामल' में कहा गया है कि जब तक मन्त्र का पुरश्चरण नहीं किया जाता, तब तक मन्त्रन्यास, जप, हवन और तर्पण का कोई फल नहीं मिल सकता-

पुरश्चरणसम्पन्नो मन्त्रो हि फलदायकः।

ततः पुरस्क्रियां कुर्यान्मन्त्रवित् सिद्धिकाङ्क्षया।।

किं होमैः किं जपैश्चैव किं मन्त्रन्यासविस्तरैः।

रहस्यानाञ्च मन्त्राणां यदि न स्यात् पुरस्क्रिया।।

पुरस्क्रिया हि मन्त्राणां प्रधानं जीवमुच्यते।

रामार्चनचन्द्रिका नामक ग्रन्थ में कहा गया है कि

यथाविहित संख्या में जप, होम, तर्पण, अभिषेक (मार्जन) तथा ब्राह्मणभोजन से मन्त्र के पुरश्चरण का क्रम पूरा होता है-

गुरोर्लब्धस्य मन्त्रस्य प्रसन्नेन यथाविधि।

पञ्चाङ्गोपासने सिद्धिः पुरश्चैतद् विधीयते।

जप होम तर्पण मार्जन तथा ब्राह्मण भोजन इस पंचाङ्ग उपासना को पुरश्चरण कहा जाता है।

जपहोमौ तर्पणञ्च सेको ब्राह्मणभोजनम्।

पञ्चाङ्गोपासनं लोके पुरश्चरणमुच्यते।।

पुरश्चरण के बिना मन्त्र सिद्धि का अभाव-

गुरुदेव से दीक्षा लेने के बाद शिष्य साधक को मन्त्र का पुरश्चरण करना चाहिए; पुरश्चरणरूप अनुष्ठान से ही देवता वश में आते हैं-

तस्मादादौ पुरश्चर्या कर्त्तव्या साधकोत्तमैः।

येनानुष्ठितमात्रेण वशमायान्ति देवताः।।

जिस के बिना मन्त्रसिद्धिकामी पुरुष का मन्त्र सैकड़ों

वर्षों तक सिद्ध नही होता है, उस मन्त्र साधन की पद्धति का नाम पुरश्चरण है। जिस प्रकार जीव अथवा प्राणरहित देह सभी कार्यों के अयोग्य होता है उसी प्रकार पुरश्चरणहीन मन्त्र सभी कार्यों अथवा प्रयोजनों के सिद्धि के अयोग्य होता है-

विना येन न सिद्धः स्यान्मन्त्रो वर्षशतैरपि।

तत् पुरश्चरणं नाम मन्त्रसिद्ध्यर्थमात्मनः।।

जीवहीनो यथा देहः सर्वकर्मसु न क्षमः।

पुरश्चरणहीनोऽपि तथा मन्त्रः प्रकीर्तितः।।

पुरश्चरण की इतिकर्तव्यता

मन्त्र-दीक्षाप्राप्त साधक गुरुदेव से आज्ञा लेकर पुरश्चरण करने का निश्चय करे। शुद्धि के लिये उपवास करके वह गुरुदेव, गणेश, ब्राह्मणों, पितरों, देवताओं, मन्त्रों और विद्याओं का यथाविधि भक्तिपूर्वक अर्चन करे। तत्पश्चात् मन्त्र का पुरश्चरण करे। यदि वह स्वयं असमर्थ है तो गुरुदेव से अथवा उनके अभाव में सर्वहितकारी किसी

ब्राह्मण से पुरश्चरण कराये-

अथ पूर्वमुपोष्याथ कृतनित्यक्रियः शुचिः।
द्विजदेवगुरून् भक्त्या सम्पूज्य मन्त्रविद्वरः।।
गणेशं साधकांश्चैव पितॄश्चैव प्रपूजयेत्।
सर्वेषामेव मन्त्राणां विद्यानाञ्च तथैव च।।
गुरोराज्ञां समादाय शुद्धान्तःकरणो बुधः।
यत्नात् पुरस्क्रियां कुर्याद् गुरुं वा कारयेद् बुधः।
गुरोरभावे विप्रोऽन्यः सर्वप्राणिहिते रतः।।

पुरश्चरण स्थान निर्णय

पुरश्चरणयोग्य स्थान–

समस्त पुण्यक्षेत्र, नदी और समुद्र का तट, तीर्थस्थान, नदियों का संगम, पवित्र वन, उद्यान, तुलसीवन, गोशाला, पीपल, आँवला या बिल्ववृक्ष का मूल, वृषरहित शिव-मन्दिर, अन्य देवताओं के मन्दिर, पर्वत की कन्दरा तथा अपना घर पुरश्चरण के लिये प्रशस्त है। इनमें से किसी

स्थान का चयन करके पुरश्चरण करना चाहिए-

समुद्रतीरेऽप्यथवाऽद्रिशृङ्गे समुद्रगाणां सरिताञ्च पाटे।

जपेद् विविक्ते निजवर्यगेहे विष्णोर्गृहे वा पुरुषो मनस्वी।।

स्थाननिर्णयश्च प्रपञ्चसारसंग्रहे

विल्ववृक्षं समाश्रित्य यो मन्त्रान् विविधान् जपेत्।

एकेन दिवसेनैव तत् पुरश्चरणं भवेत्।।

यस्तु विल्वमये नित्यं कुटीं कृत्वा जपेन्नरः।

सर्वे मन्त्राः प्रसिध्यन्ति जपमात्रेण केवलम्।।

शिवगीतायामपि

न वेदी नासनञ्चात्र न पूजा न विधिस्तथा।

उक्तसंख्यं जपं कृत्वा होमाद्यन्तु समाचरेत्।।

गङ्गामधिकृत्य कुलोड्डीशे

सूर्यस्याग्रे गुरोरिन्दोर्दीपस्य च जलस्य च।

विप्राणाञ्च गवाञ्चैव सन्निधौ शस्यते जपः।।

वायवीयसंहितायाञ्च

वीराणान्तु महानद्यास्तीरं देवालयस्तथा।

एकलिङ्गं श्मशानन्तु शून्यागारं चतुष्पथम्।।

निबन्धे षोडशपटले

विमर्श-

वीर पुरश्चरण के लिये श्मशान, एकलिंग मन्दिर, महानदियों का तट, चौराहा तथा शून्यागार (उजड़ा हुआ पुराना घर) अधिक प्रशस्त है।

भोजन-नियम

पुरश्चरण काल में भूना हुआ अनाज, हविष्यान्न, जौ, गाय में का दूध तथा उस क्षेत्र में उपलब्ध कन्द-मूल-फल ग्राह्य हैं-

भुञ्जानो वा हविष्यान्नं शाकं यावकमेव वा।

पयो वा मूलमेवात्र यदा यत्रोपलभ्यते।।

पुरश्चरण में वर्जनीय

मधु (शहद), तेल, नमक, तांबूल, कांस्य-पात्र तथा दिन में

भोजन पुरश्चरण काल में वर्जित हैं-

विवर्जयेन्मधु क्षारं लवणं तैलमेव च।

ताम्बूलं कांस्यपात्रञ्च दिवाभोजनमेव च।।

मन्त्रजप के अनन्तर कर्तव्य

पुरश्चरणकाल में स्नान के बाद मन्त्रजप, जप के बाद यथाविहित भोजन प्रशस्त है। तात्पर्य यह कि मन्त्रजप के पूर्व भोजन निषेध है। प्रतिदिन प्रातः, मध्याह्न और सायं-सन्ध्या तथा देवता का अर्चन अनिवार्य है। यदि तीनों काल में सन्ध्या करना सम्भव नहीं हो तो कम-से-कम एक बार तो अवश्यमेव सन्ध्या-वन्दन करना चाहिए। सन्ध्या किये विना मन्त्रजप करने से कोई फायदा नहीं होता-

मन्त्रं जप्त्वाऽन्नपानीयैः स्नानाचमनभोजनम्।

कुर्याद् यथोक्तविधिना त्रिसन्ध्यं देवतार्चनम्।।

त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा न मन्त्रं केवलं जपेत्।।

विमर्श-सन्ध्या दो प्रकार की है-वैदिक तथा तान्त्रिक। इनमें

से वैदिक सन्ध्या करने का अधिकार उपनयन-संस्कारसम्पन्न द्विजातियों को है। इनसे भिन्न अन्य व्यक्ति वैदिक सन्ध्या नहीं करें। ऐसे द्विजेतर व्यक्तियों के लिये केवल तान्त्रिक सन्ध्या प्रशस्त है। उपनयन-संस्कारसम्पन्न द्विज साधकों के लिये दोनों सन्ध्यायें तथा ब्रह्म-गायत्री तथा इष्ट-देवता की गायत्री का जप अनिवार्य है।

पुरश्चरण पूर्व सर्वप्रथम गुरुवन्दन

गुरुदेव साक्षात् ब्रह्मस्वरूप है। अत: यदि गुरुदेव का निवास उसी गाँव में है तो सर्वप्रथम उनका दर्शन और पूजन अनिवार्य कर्तव्य है-

एकग्रामे स्थितो नित्यं गत्वा वन्देत वै गुरुम्।

गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मादादौ तमर्चयेत्।।

पुरश्चरण काल में नित्यनैमित्तिकादिकर्तव्यता

पुरश्चरणकाल में प्रतिदिन पञ्चगव्य से अथवा केवल

आँवले से दिन में तीन, दो या एक बार स्नान करना तथा पितरों का तर्पण अनिवार्य है। स्नान और पितृ-तर्पण के विना मन्त्रजप का फल नहीं मिलता। पुरश्चरणकाल में नित्यकर्म का लोप नहीं करना चाहिए-

नित्यं नैमित्तिकं कुर्यात् संसर्ग साधुभिः सह।

स्नायाच्च पञ्चगव्येन केवलामलकेन वा।।

शक्तौ त्रिसवनस्नानमन्यथा द्विः सकृच्च वा।

अस्नातस्य फलं नास्ति न चातर्पयतः पितॄन्।।

पुरश्चरण में त्याज्य विषय

स्त्री, शूद्र, पतित, व्रात्य, नास्तिक व्यक्तियों से सम्पर्क और संगति का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिए। झूठ बोलना, कुटिल व्यवहार, उच्छिष्ट भोजन, गीत-नृत्य, नाटक, नौटंकी, अभ्यंग, तेल-मर्दन, पुष्प-धारण, मैथुन एवं तत्सम्बन्धी वार्ता एवं चिन्तन का सर्वथा त्याग कर देना चाहिए। स्त्रियों का स्पर्श भी वर्जित है। प्रतिदिन स्नान अनिवार्य है, मगर अत्यन्त गर्म पानी से स्नान वर्जित है। अनिवेदित भोजन

अर्थात् वह भोजन जो इष्टदेवता को निवेदित नहीं किया गया हो, ग्रहण नहीं करना चाहिये। सर्वोपरि बात यह है कि किसी भी प्राणी की हिंसा नहीं करनी चाहिये-

स्त्रीशूद्रपतितव्रात्यनास्तिकोच्छिष्टभाषणम्

असत्यभाषणञ्चैव कौटिल्यं दूरतस्त्यजेत्।।

वर्जयेद् गीतवाद्यादिश्रवणं नृत्यदर्शनम्।

अभ्यङ्गं गन्धलेपञ्च पुष्पधारणमेव च।।

मैथुनं तत्कथालापं तद्गोष्ठी परिवर्जयेत्।

अस्नानञ्च द्विजान् शूद्रान् स्त्रियो नैव स्पृशेत्तदा।।

त्यजेदुष्णोदके स्नानमनिवेदितभोजनम्।

प्राणिहिंसा कुर्वीत पुरश्चरणकृन्नरः।।

अन्य व्यक्ति से ग्रहण वस्तुग्रहणविचार

पुरश्चरणकाल में किसी भी अन्य व्यक्ति से अग्नि के अतिरिक्त कोई भी वस्तु माँगना अथवा किसी के द्वारा निवेदित किसी वस्तु को ग्रहण करना निषिद्ध है। यदि लेनी

ही पड़े तो पुरश्चरणस्थल के बाहर पर्व के अतिरिक्त सामान्य दिन में ग्रहण किया जा सकता है-

विहाय वह्निं नहि वस्तु किञ्चिद्

ग्राह्यं परेभ्यः सति सम्भवे च।

असम्भवे तीर्थबहिर्विशुद्धात्

पर्वातिरिक्त प्रतिगृह्य जप्यात्।।

जपहेतु निषिद्ध अवस्था

पगड़ी, टोपी और कुर्ता-कमीज पहिन कर अथवा नग्न होकर जप नहीं करें। इसीतरह बालों को खोलकर अथवा सिर को ढंककर जप करना मना है। जप के समय न तो हाथ खुले रहने चाहिये और न ही अशुद्ध होने चाहिए। मुक्तकच्छ अर्थात् बिना लंगोट पहिने जप करना मना है। इसी तरह चलते, घूमते-टहलते, लेटे-लेटे तथा चलती गाड़ी में बैठकर जप नहीं करना चाहिए। जब मन में उद्विग्नता हो, हृदय परेशान हो, चिन्तामग्न हो, क्रुद्ध हो, अन्यमनस्क हो, मन में जप करने के लिये उत्साह एवं चाव न हो, मन्त्र

का जप नहीं करें। शुद्ध-स्वच्छ, पवित्र, निरापद स्थान में यथाविहित आसन पर बैठकर प्रमुदित मन से जप किया जाय। जप के समय मण्डप या कक्ष में अन्धेरा न हो; अपितु पर्याप्त प्रकाश होना चाहिए-

ऊष्णीषी कञ्चकी नग्नो मुक्तकेशोऽप्यनावृतः।

अपवित्रकरोऽशुद्धः प्रसर्पन्न जपेत् क्वचित्।।

अनावृतकरो भूत्वा शिरसा प्रावृतोऽथवा।

चिन्ताव्याकुलचित्तो वा क्रुद्धो भ्रान्तस्त्वरान्वितः ।।

मुक्तकच्छः शयानो वा गच्छन्नुत्थित एव वा।

रथ्यायामशिवे स्थाने न जपेत्तिमिरालये।।

जप सम्बन्धी विशेष निर्देश

मन्त्र का जप न तो धीमी गति से किया जाय और न तीव्र गति से किया जाय। एक-एक वर्ण का सम्यक् रूप से उच्चारण करते हुए मध्यम गति से इस तरह जप किया जाय कि कोई अक्षर छूटने न पाये। ह्रस्व और दीर्घ स्वरों

का भेद रखा जाय। अक्षरों का उच्चारण भ्रष्ट होने पर जप का फल तो नहीं मिलता, प्रत्यवाय अवश्य होता है। इसी तरह पुरश्चरण-काल में जप की संख्या प्रतिदिन एक बराबर रखी जाय। इसमें कमी या वृद्धि नहीं की जाय-

शनैः शनैः परिस्पष्टं न द्रुतं न विलम्बितम्।

न न्यूनं नातिरिक्तञ्च जपं कुर्याद्दिने दिने।।

जप में दिनलङ्घन का निषेध

जप में निरन्तरता होनी चाहिए। नागा नहीं होना चाहिए। इसी तरह निश्चित समय पर ही जप करना चाहिए। किसी दिन सुबह, किसी दिन दोपहर अथवा रात में जप नहीं करें। जप में दिनों का व्यतिक्रम (अर्थात् नागा), जप-समय में बदलाव, तथा जपसंख्या में कमी-वृद्धि से सिद्धिहानि होती है-

नैरन्तर्यविधिः प्रोक्तो न दिनं व्यक्तिलङ्घयेत्।

दिवसातिक्रमात्तेषां सिद्धिहानिः प्रजायते।।

जप हेतु उत्तम काल

मन्त्रजप के लिये प्रातःकाल से दोपहर तक का समय प्रशस्त है-

अनन्यमानसः प्रायो जपेन्मध्यन्दिनावधि।

जप काल में वस्त्रधारण नियम

न तो केवल एक वस्त्र धारण करके जप किया जाय और न बहुत से कपड़े पहिनकर जप किया जाय। लंगोट, धोती और उत्तरीय-मात्र इतने वस्त्र प्रशस्त है-

नैकवासा जपेन्मन्त्रं बहुवासाकुलोऽपि वा।।

विमर्श-

समय का यह बन्धन दक्षिणाचारी साधकों के लिये है। वीराचारी साधना केवल रात्रि में प्रशस्त है। जहाँ तक वस्त्रों का सम्बन्ध है, कतिपय ग्रन्थों में सिले हुए वस्त्रों का भी

निषेध है।

जप काल में निषिद्ध आचरण

पतितानामन्त्यजानां दर्शने भाषणे श्रुते।

क्षुतेऽधोवायुगमने जृम्भणे जपमुत्सृजेत्।।

जप के समय पतितों और अन्त्यजों को देखना, उनसे बात करना, अधोवायु का निस्सारण तथा जम्हाई लेना निषिद्ध है।।

उपर्युक्त दोष प्रसङ्ग उत्पन्न होने पर कर्तव्य शौचाचार

यदि जप करते समय कोई पतित या अन्त्यज दिख जाय, जम्हाई आदि आ जाय तो जप छोड़कर आसन से उठकर, हाथ-पैर धोकर, फिर से प्राणायाम और षडङ्ग न्यास करके अथवा भगवान् सूर्य का सम्यक् रूप से दर्शन करके शेष जप को पूरा करना चाहिए-

उत्थायाचम्य तत्प्राप्तौ प्राणायामं षडङ्गकम्।

कृत्वा सम्यग् जपेच्छेषं यद्वा सूर्यादिदर्शनम्।।

पुरश्चरण काल में शय्यानियम

पुरश्चरण-काल में साधक को प्रतिदिन कुश की शय्या पर अकेला सोना चाहिए। शैया को और शैया बिछाने के स्थान को प्रतिदिन धोना तथा साफ करना चाहिए-

शयीत कुशशय्यायां शुचिवस्त्रधरः सदा।

प्रत्यहं क्षालयेच्छय्यामेकाकी निर्भयः स्वपेत्।।

देवीपूजाहेतु आधारकथन

लिङ्गस्थां पूजयेद्देवीं पुस्तकस्थां तथैव च।

स्थण्डिलस्थां महामायां पादुकाप्रतिमासु च।।

चित्रिते त्रिदिनेनाथ जलस्थां वाऽपि पूजयेत्।

पुरश्चरण काल में इष्टदेवता का पूजन अनिवार्य है। यदि पूजन यन्त्र न हो तो शिवलिंग में, शालिग्राम में, प्रतिमा में, पुस्तक में, चित्र में, स्थण्डिल में अथवा जल में देवी की पूजा की जाय॥

खड्गादिमें आवाहनपूर्वक ईष्टदेवतापूजन की विशेषविधि

पञ्चाशदङ्गुलं खड्गं त्रिशिखञ्च त्रिशूलकम्।।

शिलायां पर्वतस्याग्रे तथा पर्वतगह्वरे।

देवी सम्पूजयेन्नित्यं भक्तिप्रभासमन्वितः।।

पर्वत की चोटी या पर्वत की कन्दरा का आश्रय लेकर पुरश्चरण किया जा रहा है तो पचास अंगुल के खड्ग में, तीन शिखा वाले त्रिशूल में देवी की पूजा भक्तिभाव से की जाय।।

देशअथवा स्थान विशेष में देवीपूजा का फल

वाराणस्यां कृता पूजा सम्पूर्णफलदायिनी।

ततश्चतुर्गुणा प्रोक्ता पुरुषोत्तमसन्निधौ।।

ततोऽपि द्विगुणा पूजा द्वारवत्यां विशेषतः।

सर्वक्षेत्रेषु पीठेषु पूजा द्वारवतीसमा।।

विन्ध्ये शतगुणा प्रोक्ता गङ्गायामपि तत्समा।

आर्यावर्ते मध्यदेशे ब्रह्मावर्ते तथैव च।।

विन्ध्ये च फलदा पूजा प्रयागे पुष्करे तथा।

ततश्चतुर्गुणा प्रोक्ता करतोयानदीजले।।

वाराणसी में पूजा का सम्पूर्ण फल मिलता है। पुरुषोत्तम क्षेत्र (पुरी) में उससे चारगुना, द्वारवती (द्वारिका) में तथा अन्य क्षेत्रों तथा पीठों में दोगुना, विन्ध्य क्षेत्र में सौगुना, गंगा क्षेत्र में, आर्यावर्त, मध्य देश तथा ब्रह्मावर्त में, प्रयाग में, पुष्कर में, विन्ध्य क्षेत्र के बराबर तथा करतोया नदी के जल में उससे भी अधिक चारगुना फल मिलता है।।

तस्माच्चतुर्गुणा प्रोक्ता नन्दिकेश्वरसन्निधौ।

ततः सिद्धेश्वरीयोनौ तस्माद् द्विगुणसिद्धिदा।।

ततश्चतुर्गुणा प्रोक्ता लौहित्यनदकुण्डके।

तत्समा कामरूपेण सर्वत्रैव जले स्थले।।

सर्वश्रेष्ठो यथा विष्णुर्लक्ष्मीः सर्वोत्तमा यथा।

देवीपूजा तथा शस्ता कामरूपे सुरालये।।

देवीक्षेत्र क़ामरूपं विद्यते न हि तत्समम्।

अन्यत्र विरला देवी कामरूपे गृहे गृहे।।

ततः शतगुणं प्रोक्तं नीलकूटस्य मण्डलम्।

ततोऽपि द्विगुणं प्रोक्तं हैरके शिवलिङ्गके।।

ततः शतगुणं प्रोक्तं कामाख्यायोनिमण्डले।

कामाख्यायां महामाया-पूजां यः कृतवान् सकृत्।।

स चेह लभते कामान् परत्र शिवरूपताम्।

न तस्य सदृशोऽप्यस्ति कृति तस्य न विद्यते।

वामकेश्वरतन्त्रेषु प्रभुणोक्तमिदं मतम्।।

उससे चारगुना अधिक नन्दिकेश्वर क्षेत्र में, उससे दोगुना सिद्धीश्वरी योनि क्षेत्र में तथा उससे चारगुना अधिक फल लौहित्यनद (ब्रह्मपुत्र) क्षेत्र में मिलता है। कामरूप क्षेत्र में जल या स्थल में सर्वत्र इतना ही पूजाफल मिलता है। जिस तरह सभी देवताओं में विष्णु और लक्ष्मी श्रेष्ठ हैं, उसी तरह देवीपूजा के लिये कामरूप सर्वश्रेष्ठ स्थान हैं। अन्य देशों में तो कुछ विरले स्थानों में ही देवी का तेजोरूप प्रतिष्ठित है; लेकिन कामरूप में तो घर-घर में वे विद्यमान हैं। इसीलिये नीलकूट मण्डल को अन्य स्थानों से सौगुना प्रशस्त माना गया है। हैरक शिवलिंग क्षेत्र नीलकूट से दोगुना तथा कामाख्या योनिमण्डल उससे भी सौगुना श्रेष्ठ पूजास्थान है। जिसने एक बार भी कामाख्या धाम में महामाया की पूजा कर ली, समझो उसने सब कुछ पा लिया। ऐसे

साधक शिवरूप हो जाते हैं और उनके सदृश और कोई अन्य नहीं होता। वामकेश्वर तन्त्र में स्वयं भगवान् शिव ने ऐसा कहा है।।